हमें कैसे पता चला कि

पृथ्वी गोल है

आइजिक ऐसिमोव

अनुवादः अरविन्द गुप्ता

1 क्या पृथ्वी चपटी है?

पुराने जमाने में सभी लोग पृथ्वी को चपटा समझते थे। क्योंकि पृथ्वी सभी ओर समतल दिखती थी शायद इसीलिए लोग पृथ्वी को चपटा समझते थे। अगर आप समुद्र के बीच किसी नाव पर होंगे तो आपको सभी दिशाओं में पानी एकदम समतल लगेगा और ऊपर का आसमान किसी उल्टे हुए प्याले जैसा दिखेगा। जहां आसमान और पानी आपस में मिलते हैं उस रेखा को 'क्षितिज' कहते हैं। नाव में बैठे हुए आपको क्षितिज एक गोल छल्ला लगेगा, और आप उसके केंद्र में स्थित होंगे।

जमीन से भी आपको क्षितिज दूर तक फैला हुआ दिखाई देगा। पर जमीन पर आपको क्षितिज समतल नहीं दिखेगा। मकानों, पेड़ों, पहाड़ियों और अन्य चीजों के कारण क्षितिज-रेखा ऊपर-नीचे होगी।

पुराने लोग पृथ्वी को सभी ओर अनंत तक फैला हुआ मानते थे। वे पृथ्वी को जमीन और समुद्र का एक बहुत बड़ा, अंतहीन टुकड़ा मानते थे।

पर ऐसी स्थिति में वे सूर्य के उदय और अस्त होने को कैसे समझते? उनके अनुसार सूर्य हर रोज सुबह को पूर्व में उगता था। दिन भर आसमान की सैर कर सूर्य शाम को पश्चिम में अस्त होता था। अगले सुबह सूर्य फिर से पूर्व में उदय होता था।

कुछ लोगों के अनुसार रोज एक नए सूर्य का निर्माण होता था। नया सूर्य पूर्व में उदय होता था। और अस्त होते समय वो पूर्णतः ध्वस्त हो जाता था।

कुछ लोगों का अगल ही मत था। वे सूर्य को रोजाना पश्चिम की ओर महासागर में अस्त होता देखते थे। उनके अनुसार सूर्य रात को एक नाव में सवार होकर पूर्व की ओर आता था। फिर अगली सुबह सूर्य दुबारा उगने के लिए तैयार होता था।

कुछ लोगों की कल्पना के अनुसार सूर्य एक जलता हुआ सुनहरा रथ था जिसे जादुई घोड़े हवा में खींचते थे। सुबह के समय सूर्य देवता, पूर्व दिशा में रथ पर सवार होते। फिर वे अपने घोड़ों के साथ हवा में चढ़ते हुए दोपहर तक आसमान की चोटी पर पहुंचते। फिर वे नीचे की ओर दौड़ लगाते और शाम ढलने तक दूर स्थित पश्चिमी मैदान में पहुंचते। सूर्य देवता रात के समय पूर्व में वापिस आते। उस समय उनके रथ से कोई प्रकाश नहीं निकलता था।

ध्रुव तारे से दूर स्थित तारे इतने बड़े गोले में घूमते कि अक्सर वे क्षितिज के नीचे डूब जाते। वे तारे पूर्व में उगते और पश्चिम में अस्त होते।

चंद्रमा भी आसमान में पूर्व से पश्चिम की दिशा में सैर करता। तारे भी वही करते। इन सबको समझना जरूरी था। पुरानी मान्यताओं से इन्हें समझाना बहुत कठिन था।

अगर पृथ्वी को चपटा मान भी लें तो फिर उसकी गहराई कितनी थी? अगर कोई पृथ्वी में एक गड्ढा खोदे तो वो कितनी गहराई तक खोद सकेगा? क्या इस गड्ढे का कोई अंत होगा, या नहीं?

क्या पृथ्वी एक चपटी रोटी थी? क्या वो एक-मील, मोटी थी? या दस-मील या फिर पचास-मील मोटी? अगर पृथ्वी किसी चीज की बनी एक चपटी रोटी थी, तो फिर वो गिरती क्यों नहीं थी? पृथ्वी टिकी क्यों रहती थी?

प्राचीन कालीन भारतीयों के अनुसार पृथ्वी बड़े विशालकाय हाथियों की पीठ पर टिकी थी। इसीलिए वो गिरती नहीं थी।

फिर सवाल यह उठता था कि यह हाथी किस पर खड़े थे? भारतीय चिंतकों के अनुसार ये हाथी एक विशाल कछुए पर खड़े थे।

और फिर वो कछुआ कहां खड़ा था? भारतीयों के अनुसार कछुआ एक बड़े महासागर में तैर रहा था।

तो क्या महासागर बेहद गहरे थे? क्या उनकी गहराई एकदम नीचे तक जाती थी? इस प्रश्न का किसी के पास कोई उत्तर नहीं था।

यह बात स्पष्ट थी कि पृथ्वी को पूरी तरह चपटा और समतल मान लेने में तमाम दिक्कतें थीं।

पृथ्वी के चपटे होने से पैदा समस्याओं के बारे में जिन लोगों ने सबसे पहले चिंतन किया वे लोग यूनान में लगभग 2,500 साल पहले रहते थे। यह स्थान आज तुर्की के पश्चिमी तट पर स्थित है।

एक यूनानी चिंतक का नाम था एनैक्सीमैंडर। वो इन कहानी-किस्सों से असंतुष्ट था। सूर्य देवता, दीप्तीमान रथों और उड़ने वाले घोड़ों की कहानियां उसे ठीक नहीं लगती थीं। उसने रात के आसमान को ध्यान से निहारा, और उसे जो कुछ भी दिखा उसने उसके बारे में खुद से प्रश्न पूछे।

रात के निर्मल आकाश में उसे तारे दिखे। रात के समय उसे यह तारे आकाश की सैर करते नजर आए।

पर उनमें से एक तारा ऐसा भी था जो अपनी जगह से बिल्कुल भी नहीं हिलता-डुलता था। यह उत्तर दिशा में स्थित ध्रुव तारा था। वो पूरी रात उत्तर दिशा में एक ही जगह स्थित रहता था। आसपास के तारे उसके चारों ओर गोल चक्कर लगाते। ध्रुव तारे के नजदीक स्थित तारे, छोटे गोलों में घूमते। जो तारे ध्रुव तारे से दूर होते, वे बड़े गोलों में चक्कर लगाते।

एनैक्सीमैंडर को रात्रि आकाश में तारों की गतिशीलता में एक नमूना नजर आया। रात के आकाश की यह बात उसे सबसे महत्वपूर्ण लगी। मधुमक्खियों के बवंडर में हरेक मधुमक्खी बेतरतीब तरीके से इधर-उधर उड़ती थी। परंतु तारों की गति मधुमक्खियों से एकदम भिन्न थी। तारे एक खास नमूने में घूम रहे थे।

रात में सभी तारे एक साथ घूम रहे थे।

एनैक्सीमैंडर को आकाश एक बड़ी, खोखली गेंद जैसा लगा। उसे लगा जैसे आकाश-गेंद किसी अदृश्य रेखा या 'धुरी' पर घूम रही हो। इस धुरी का एक छोर आसमान में ध्रुव तारे पर स्थित था। धुरी का दूसरा छोर आकाश-गेंद की दूसरी ओर स्थित था। धुरी के दूसरे छोर को एनैक्सीमैंडर के लिए देख पाना संभव नहीं था।

हर रोज आकाश-गेंद घूमती। क्योंकि सारे तारे इस आकाश गेंद पर चिपके थे इसलिए वे भी उसके

साथ-साथ घूमते। इसीलिए हमेशा तारों के एक-जैसे नमूने ही देखने को मिलते। क्योंकि इस आकाश-गेंद पर सूर्य और चंद्रमा भी चिपके थे। इसलिए वे भी उदय और अस्त होते।

आकाश तो गेंदनुमा था। क्या फिर भी पृथ्वी का चपटी हो सकती थी? एनैक्सीमैंडर को आकाश-गेंद के केंद्र में पृथ्वी एक चपाती जैसी स्थित लगी।

जैसे-जैसे आकाश-गेंद घूमती, वैसे-वैसे सूर्य पूर्व में उगता और आसमान की सैर करने के बाद पश्चिम में अस्त होता। घूमती आकाश-गेंद, सूर्य को सैर कराती। आकाश के घूमने के साथ सूर्य भी गेंद के निचले हिस्से में चला जाता। जब सूर्य पृथ्वी की चपाती के नीचे की ओर चमकता, तब रात होती। जब घूमती आकाश-गेंद सूर्य को घुमाकर पूर्व में लाती तो फिर सूर्य पुनः उदय होता और सुबह होती। चांद और तारे भी इसी प्रकार घूमते। एनैक्सीमैंडर की कल्पना पहले की अटकलों से ज्यादा सही थी। इसमें न तो सूर्य हर रात ध्वस्त होता और न ही वो रात में नाव पर चढ़कर पश्चिम से पूर्व की ओर जाता। परंतु एनैक्सीमैंडर अभी भी अपनी कल्पना से पूरी तरह संतुष्ट नहीं था। उसने और गहराई से सोचा।

2 लुप्त होते तारे

पृथ्वी एक चपटी चपाती जैसे आकाश-गेंद के बीच स्थित हो सकती थी। इस स्थिति में अगर हम बिना रुके चलते रहते, तो हम जरूर कभी-न-कभी पृथ्वी और आकाश के मिलन स्थल- यानि क्षितिज तक पहुंच जाते। हम पूर्व में सूर्य के उदय स्थल तक भी जा पाते। हम चाहें तो वहां पर जाकर सूर्य को छू भी सकते थे (पर शायद उसकी गर्मी हमें मार देती)।

और पश्चिम दिशा में चलते-चलते हम अवश्य कभी-न-कभी सूर्य के अस्त होने वाले स्थान पर भी पहुंच जाते।

सदियों पहले कुछ लोग इसी प्रकार सोचते थे। उन्होंने इसे दर्शाने के लिए क्षितिज पर खड़े हुए एक आदमी का चित्र भी बनाया था। चित्र में आदमी आसमान के ऊपर उठ उस विशालकाय मशीन को देख रहा था जो आकाश की गेंद को घुमाती थी।

परंतु प्राचीन यूनानी दार्शनिकों को इन फालतू की कल्पनाओं में कोई यकीन नहीं था। क्योंकि, पूर्व या पश्चिम की लंबी-से-लंबी यात्रा करने के बाद भी सूर्य, चांद और तारे बिल्कुल भी धरती के पास नजर नहीं आते थे।

शायद पृथ्वी, आकाश के एक छोर से दूसरे छोर तक नहीं खिंची थी। पृथ्वी और आकाश के मिलन का स्थान - यानि क्षितिज मात्र एक भ्रम था - आंखों का धोखा था।

शायद पृथ्वी की चपटी परत काफी बड़ी होने के बावजूद, आकाश की गेंद से बहुत छोटी थी। इस स्थिति में सूर्य, चांद और तारे पृथ्वी के किनार से बहुत दूर होते। पृथ्वी से कोई भी उन तक पहुंच नहीं पाता, और न ही उनके बहुत करीब आ पाता।

अगर पृथ्वी, आकाश-गेंद के केंद्र में एक चपटी रोटी जैसी थी, और आकाश उसकी किनार से बहुत दूर पर था तो फिर यात्री बहुत लंबे सफर के बाद भी कभी पृथ्वी की किनार तक क्यों नहीं पहुंचे?

शायद पृथ्वी का जमीन वाला हिस्सा मध्य में था और यह जमीन चारों ओर समुद्रों से घिरी थी। लंबी-लंबी यात्राओं के बाद मुसाफिर अक्सर किसी समुद्र या महासागर के तट पर ही पहुंचते थे। प्राचीन काल में लोग बहुत लंबे समुद्री सफर नहीं करते थे। शायद इसी कारण वे कभी पृथ्वी की किनार तक नहीं पहुंच पाए।

इस हालत में समुद्रों का पानी पृथ्वी की किनार से नीचे की ओर क्यों नहीं गिरता था?

शायद पृथ्वी की किनार सभी ओर थाली जैसे ऊपर को उभरी थी, जिससे उसमें पानी ठहरा रहे। पृथ्वी का आकार चपटी रोटी न होकर एक छिछले कटोरे जैसा हो सकता था।

इस हालत में पूरी पृथ्वी नीचे क्यों नहीं गिरती थी?

पृथ्वी को चपटा मानने में अभी भी काफी मुश्किलें थीं। सूर्य उदय और अस्त की समस्या सुलझने, और आकाश को एक बड़ी गेंद मानने के बाद भी पृथ्वी को चपटा मानने में तमाम दिक्कते थीं।

अगर पृथ्वी चपटी नहीं थी, तो फिर उसका आकार क्या था?

रात्रि आकाश में चमकने वाली चीजों में अधिकांश तारे थे। तारे दिखने में प्रकाश के बिल्कुल छोटे बिंदु लगते थे। इसलिए प्राचीन दार्शनिक उनके बारे में ज्यादा नहीं जानते थे।

आकाश में दो ऐसे भी पिंड थे जो बिल्कुल अलग छिटकती थे। वे थे - सूर्य और चंद्र।

सूर्य हमेशा आग के गोले जैसा दमकता था, परंतु चंद्रमा के साथ ऐसा नहीं था। चंद्रमा कभी प्रकाश का पूरा गोला तो कभी आधा-गोला दिखता था। कभी-कभी वो पूरे और आधे गोल के बीच के आकार का दिखता था। कभी चंद्रमा हंसिए के आकार का पतला गोल वक्र नजर आता था।

यूनानियों ने चंद्रमा का गहन अध्ययन किया। उन्होंने चंद्रमा की स्थिति को, सूर्य के सापेक्ष बदलता हुआ पाया। उन्हें लगा कि चंद्रमा अपनी स्थिति के साथ-साथ अपना आकार भी बदलता था।

कभी-कभी पृथ्वी के एक ओर सूर्य और दूसरी ओर चंद्रमा होता। इस स्थिति में चंद्रमा हमेशा प्रकाश का संपूर्ण गोल दिखाई देता। सूर्य की किरणें पृथ्वी को पार कर चंद्रमा पर पड़ती थीं। इससे चंद्रमा का पूरा गोल चेहरा खिल उठता था।

कभी-कभी जब सूर्य और चंद्रमा दोनों, पृथ्वी के एक ही ओर होते तो यूनानियों को चंद्रमा बिल्कुल भी दिखाई नहीं देता था। तब सूर्य की किरणें चंद्रमा के उस भाग पर पड़तीं जो पृथ्वी से दिखाई ही नहीं देता था। चंद्रमा का जो भाग पृथ्वी से दिखता था उस पर कोई प्रकाश नहीं पड़ता था। इसलिए चंद्रमा दिखाई ही नहीं देता था।

प्राचीन दार्शनिक अपने अध्ययन के बाद इस निष्कर्ष पर पहुंचे - सूर्य का अपना खुद का प्रकाश था जबकि चंद्रमा का अपना कोई प्रकाश न था। चंद्रमा इसीलिए दमकता था क्योंकि सूर्य उसे चमकाता था। चंद्रमा, सूर्य के प्रकाश को प्रतिबिंबित करता था।

प्राचीन यूनानियों ने 'ज्यामिति' का अध्ययन भी शुरू किया था। 'ज्यामिति' का चीजों के आकार से संबंध होता है। उन्होंने चंद्रमा की चमकती विभिन्न कलाओं को गौर से देखा - अर्धचंद्र, हंसिए जैसे चंद्र और अन्य आकृतियों का अध्ययन किया। उन्हें स्पष्ट लगा कि चंद्रमा की यह कलाएं - अलग-अलग चमकने वाले आकार तभी दिखेंगे जब चंद्रमा का आकार एक गोल गेंद जैसा होगा।

फिर सूर्य का आकार कैसा होगा? सूर्य का प्रकाश सभी कोणों से चंद्रमा पर एक-जैसा पड़ता था। सूर्य

और चंद्रमा चाहें एक ओर, एक-दूसरे से विपरीत, या फिर किसी बीच की स्थिति में हों, लेकिन हर स्थिति में चंद्रमा के सूर्य की ओर वाले चेहरे पर एक-जैसा ही प्रकाश पड़ता था। यह तभी संभव था जब सूर्य का आकार गेंद जैसा होता।

इस अध्ययन के बाद एनैक्सीमैंडर इस निष्कर्ष पर पहुंचा - आकाश में तीन वस्तुओं का एक विशेष आकार था। ये तीन थीं - सूर्य और चंद्रमा और साथ में पूरा आकाश। इन तीनों का आकार गोल गेंद जैसा था।

क्या इस कारण पृथ्वी को भी गोल समझा जा सकता था? क्या वास्तव में पृथ्वी चपटी नहीं ब्लकि गोल थी?

इस पर निश्चित रूप से कुछ कहना मुश्किल था। क्या आकाश और पृथ्वी पर अलग-अलग नियम लागू होते थे? आकाश और उसमें घूमते कुछ पिंड गोल थे। पर इस कारण पृथ्वी को भी गोल मान लेना सही नहीं था। पृथ्वी और इन पिंडों में कुछ और भी अंतर थे। सूर्य आग का गोला था, परंतु पृथ्वी ऐसी नहीं थी। चंद्रमा आकाश में इधर-उधर घूमता था, पर पृथ्वी के साथ ऐसा नहीं था। आकाश अनंत तारों से भरा था, पर पृथ्वी पर ऐसा कुछ भी नहीं था।

इसलिए पृथ्वी के आकार को जानने के लिए अन्य पिंडों को अनदेखा कर, पृथ्वी को ही और गहराई से देखने की जरूरत थी।

हम पृथ्वी पर वादस-मील या पचास-मील वापस जाकर खुद से निम्न प्रश्न पूछ सकते हैं : क्या पृथ्वी पर अलग-अलग स्थानों से हमें आकाश के तारे भिन्न दिखाई देंगे?

अगर पृथ्वी चपटी होती तो ऐसा न होता। तब किसी भी साफ आसमान में, रात के समय हमें सभी तारे दिखाई देते। हम चाहें चपटी पृथ्वी पर कहीं भी होते तो भी हमें वही सब तारे दिखाई देते।

पर वास्तविकता इससे बिल्कुल अलग थी!

प्राचीन काल में कई लोगों को दूर-दराज का सफर करना पड़ता था। उत्तर की ओर यात्रा करने वालों को रात का आसमान कुछ अलग नजर आता था। कुछ तारे जो उन्हें अपने घर से दक्षिण क्षितिज पर दिखाई देते थे वो तारे उत्तर की ओर यात्रा करने पर लुप्त हो जाते थे। और जब वे लोग वापस घर आते तो उन्हीं तारों को दक्षिण क्षितिज पर वापस देख वे आश्चर्यचकित होते थे।

जो दक्षिण की ओर यात्रा करते उनका अनुभव इससे बिल्कुल उल्टा होता। दक्षिण की ओर जाने पर उन्हें कुछ एकदम नये तारे दिखाई देते। इन तारों को उन्होंने अपने घर से पहले कभी नहीं देखा था। घर वापिस आने पर ये नए तारे फिर लुप्त हो जाते।

यह बात उत्तरी क्षितिज के लिए भी उतनी ही सच थी। घर पर कुछ तारों के समूह घूमते समय क्षितिज के नीचे चले जाते थे। परंतु उत्तर की ओर यात्रा के बाद तारों के वही समूह हमेशा क्षितिज के थोड़ा ऊपर रहते थे। हां, घर से जो तारे क्षितिज के थोड़ा ऊपर दिखते वे दक्षिण की यात्रा करते समय क्षितिज के नीचे अस्त होने लगते थे।

एक बात निश्चित थी - पृथ्वी पर सभी जगह से सभी तारे नहीं दिखाई देते थे। इसलिए पृथ्वी चपटी नहीं हो सकती थी। यह बात बिल्कुल साफ थी।

हो सकता था पृथ्वी का आकार एक गोल टीन के 'बेलनाकार' डिब्बे जैसा हो। एनैक्सीमैंडर ने पृथ्वी

की कल्पना लगभग इसी रूप में की थी। एनैक्सीमैंडर को पृथ्वी आकाश के गोले के बीचोंबीच स्थित बेलनाकार डिब्बे जैसी लगी। उत्तर की ओर जाते समय आप डिब्बे के वक्र पर यात्रा करते। जब आप पीछे की ओर देखते तो दक्षिण के कुछ तारे डिब्बे के वक्र के कारण छिप जाते। दक्षिण की ओर जाते समय भी आप डिब्बे के वक्र पर ही यात्रा करते। अब जब आप पीछे मुड़कर देखते तो डिब्बे के वक्र के कारण उत्तर के चंद तारे छिप जाते।

पृथ्वी पर दो भिन्न स्थानों से, आकाश में तारे बदले हुए क्यों दिखाई देते थे? इस बात से ऊपर के इस तथ्य को समझा जा सकता था।

3 लुप्त होते पानी के जहाज

एनैक्सीमैंडर की कल्पना के अनुसार पृथ्वी का आकार एक डिब्बे जैसा था। इससे कुछ प्रश्न उठते थे।

अगर पृथ्वी बेलनाकार थी तो फिर वो चपटी क्यों नजर आती थी?

इसका उत्तर एकदम आसान था। पृथ्वी बहुत बड़ी थी और इंसान उसकी तुलना में बहुत छोटे थे। इसीलिए हम जब कभी भी नजर दौड़ाते, तो हम पृथ्वी का बहुत छोटा सा हिस्सा ही देख पाते। पृथ्वी के इस छोटे से भाग में उसका घुमाव इतना कम होता कि वो देखने में लगभग चपटा दिखता था।

इसको अच्छे ढंग से समझने के लिए एक कई फीट बड़े गुब्बारे की कल्पना करें। इस गुब्बारे पर एक छोटे (0.125 इंच व्यास) गोले की कल्पना करें। अगर कोई छोटा कीड़ा गुब्बारे के केवल इस छोटे गोले को देखेगा तो उसे गुब्बारा लगभग चपटा नजर आएगा।

यहां एक और प्रश्न था, जो अधिक कठिन था। किसी घुमावदार वक्र पर उत्तर या दक्षिण की यात्रा करते समय आपको नीचे ढाल पर चलने जैसा क्यों नहीं महसूस होता था? और फिर आप नीचे की ओर फिसलते क्यों नहीं?

शायद जमीन के ऊबड़-खाबड़ होने के कारण आप फिसले नहीं। फिर चिकनी सड़क पर यात्रा करते हुए आप क्यों नहीं फिसले? अगर आप समुद्री जहाज द्वारा उत्तर या दक्षिण की यात्रा करते होते, तो फिर क्या होता? आपका जहाज आगे की ओर क्यों नहीं लुढ़का? हां, पूरे समुद्र का पानी ही धरती की कगार से नीचे की ओर क्यों नहीं लुढ़क गया?

एनैक्सीमैंडर के पास इस प्रश्न का कोई सही उत्तर नहीं था। उसे लगा कि पृथ्वी को बेलनाकार डिब्बे के आकार का मानकर ही रात के आकाश को ठीक प्रकार समझा जा सकता था।

उत्तर या दक्षिण की यात्रा के दौरान ही पृथ्वी का वक्र क्यों घूमता था? पूर्व या पश्चिमी दिशा में यात्रा करने पर क्या होता? तब क्या रात के आसमान में तारों का नमूना बदलता? पूर्व दिशा में यात्रा करते समय क्या पश्चिम क्षितिज के तारे लुप्त होते? क्या पश्चिम की यात्रा के दौरान पूर्व क्षितिज के तारे छिपते?

इसके बारे में कुछ कहना कठिन था। क्योंकि आसमान घूमता था इसलिए तारे हमेशा पूर्वी क्षितिज पर उगते, और पश्चिमी क्षितिज पर लुप्त होते। पूर्व और पश्चिम की यात्रा करने से इसमें कोई फर्क नहीं पड़ता था।

अगर कभी आसमान का घूमना बंद होता तो तारों के पूर्व में उदय और पश्चिम में अस्त होने की पुष्टि की जाती सकती थी। परंतु असलियत में आसमान एक क्षण के लिए भी घूमना बंद नहीं करता था। इसलिए इस बात से कोई खास मदद नहीं मिलती थी।

परंतु ठोस सबूत के अभाव में किसी निष्कर्ष पर पहुंचना ठीक नहीं था। किसी चीज को साबित करने के लिए उसके लिए प्रमाण होना जरूरी था।

क्या पृथ्वी के आकार को जानने का कोई अन्य तरीका था? कोई ऐसा तरीका जिसमें आसमान के घूमने की आवश्यकता ही न पड़ती।

इस प्रकार की जानकारी को आसानी से समुद्र के तट पर इकट्ठा किया जा सकता था। और इसमें आसमान से कोई प्रश्न पूछने की जरूरत भी नहीं थी।

अगर पृथ्वी चपटी होती तो तट से दूर जाता जहाज धीरे-धीरे करके छोटा, और छोटा होता नजर आता। अंत में जहाज एक छोटे बिंदु जैसा दिखता और फिर लुप्त हो जाता।

परंतु वास्तविकता में ऐसा नहीं होता था। शुरू में तट से दूर जाता समूचा जहाज दिखाई देता। फिर नीचे की ओर जहाज का पेटा (*हल*) और ऊपर जहाज का मस्तूल नजर आता था। परंतु कुछ देर के बाद पेटा लुप्त हो जाता। ऐसा लगता जैसे पेटा पानी में डूब गया हो। अब सिर्फ जहाज का मस्तूल ही दिखाई देता। बाद में मस्तूल का केवल ऊपरी भाग दिखाई देता। अंत में जहाज पूरी तरह गायब हो जाता।

क्या सच में जहाज डूब रहा था? क्या जहाज के पेटे और मस्तूल का डूबना, समुद्र का जलस्तर बढ़ने के कारण था?

इसकी संभावना कम थी, क्योंकि जो जहाज समुद्र में जाते उनमें से अधिकांश सुरक्षित वापिस लौटकर आते। प्राचीन काल में जब नाविक समुद्री यात्रा से वापिस आते तो लोग उनसे इस घटना के बारे में पूछते थे। क्या समुद्र का जलस्तर बढ़ा था? नाविक कसम खाकर बताते कि पूरी यात्रा के दौरान कभी भी जलस्तर जहाज के पेटे के ऊपर नहीं गया था।

फिर इस घटना को किस प्रकार समझा जा सकता था?

इसका एक कारण हो सकता था। शायद पृथ्वी की सतह एक वक्र (कर्व) में मुड़ती हो। तो फिर जहाज वक्र पर तैरेगा और धीरे-धीरे करके वो वक्र के पीछे लुप्त हो जायेगा। ऐसा करते समय उसका निचला भाग सबसे पहले लुप्त होगा।

जिस प्रकार पृथ्वी के वक्र के कारण, जहाज आंखों से ओंझल होते, उसी कारण तारे भी क्षितिज के नीचे छिपते।

पर इस सब में एक अंतर था। केवल उत्तर या दक्षिण की यात्रा के दौरान ही आपको पृथ्वी के वक्र के कारण तारे लुप्त होते प्रतीत होते। अन्य दिशाओं में बदल आसमान के घूमने के कारण होती थी।

परंतु दूसरी ओर, समुद्री जहाज चाहें किसी भी दिशा में जा रहे हों, उनका निचला पेंदा ही सबसे पहले लुप्त होता था। चाहें जहाज उत्तर, दक्षिण, पूर्व, पश्चिम या अन्य किसी दिशा में क्यों न जा रहे हों, उनका पेंदा ही सबसे पहले गायब होता था।

हां, एक और महत्वपूर्ण बात थी। सभी जहाज लगभग एक ही गति से लुप्त होते थे। चाहें दिशा कोई भी क्यों न हो, तट से 2-मील की दूरी पर जहाजों के पेटे का लगभग एक-जितना भाग ही पानी में डूबा नजर आता था।

ऐसा लगता था जैसे पृथ्वी सभी दिशाओं में मुड़ रही हो, और उसका यह मुड़ना (वक्र) सभी दिशाओं में एक-जैसा हो।

केवल एक ही ऐसी आकृति थी जो सभी दिशाओं में एक-समान मुड़ती थी - वो थी गेंद। अगर आप किसी बड़ी गेंद पर एक बिंदु बनायें और फिर उस बिंदु से अलग-अलग दिशाओं में दूर जाती रेखायें बनायें, तो आप सभी रेखाओं को एक-समान मुड़ता हुआ पायेंगे।

समुद्री जहाजों के साथ जो देखने में आया उससे एक ही निष्कर्ष निकल सकता था। कि हमारी पृथ्वी बेलनाकार डिब्बे जैसी नहीं, ब्लकि एक गेंद जैसी गोल थी। पृथ्वी की गेंद, आकाश की बहुत बड़ी गेंद के बीच में स्थित थी। क्योंकि पृथ्वी बहुत बड़े आकार की गेंद थी इसलिए उसका जो छोटा हिस्सा हम एक समय में देख पाते थे वो हमें लगभग समतल या चपटा दिखता था।

4 पृथ्वी की परछाई

कभी-कभी अचानक चंद्रमा का चमकना बंद हो जाता था। तब एक काली परछाई चंद्रमा को ढंकती और फिर एक हल्की लाल रोशनी ही दिखाई देती। कुछ देर बाद यह परछाई हट जाती और दुबारा से चंद्रमा चमकने लगता था।

इस घटना के चंद्र-ग्रहण कहते थे।

पुराने जमाने में चंद्र-ग्रहण से लोग बुरी तरह घबरा जाते थे। उन्हें लगता था कि ग्रहण से चंद्रमा का प्रकाश सदा के लिए छिन जायेगा। फिर रात में चंद्रमा के प्रकाश के अभाव में उन्हें बहुत परेशानी होगी।

पर आकाश का गहरा अध्ययन करने वालों को ऐसा नहीं लगता था। उन्होंने पाया कि चंद्र-ग्रहण हमेशा पूर्णमासी के समय ही होता था। चंद्र-ग्रहण अन्य किसी समय नहीं होता था। एक और खास बात थी। चंद्र-ग्रहण हमेशा किसी विशेष पूर्णमासी पर ही होता था।

प्राचीन यूनानियों ने आकाश का गहरा अध्ययन किया था। उन्होंने पूर्णमासी पर, पृथ्वी के एक ओर चंद्रमा और दूसरी ओर सूर्य को स्थित पाया था। इस स्थिति में सूर्य का प्रकाश पृथ्वी से गुजरता हुआ चंद्रमा पर पड़ता था। जब सूर्य का प्रकाश पूरे चंद्रमा पर पड़ता तो यूनानियों को चंद्रमा का पूरा गोला चमकता हुआ दिखाई देता।

अगर पृथ्वी, चंद्रमा और सूर्य के बिल्कुल मध्य में स्थित होती तो सूर्य के प्रकाश को चंद्रमा तक पहुंचने के लिए पृथ्वी से होकर गुजरना पड़ता। ऐसी हालत में सूर्य की रोशनी पृथ्वी से टकराती और इस कारण चंद्रमा तक सूर्य का प्रकाश नहीं पहुंच पाता।

इसे चंद्रमा पर पृथ्वी की परछाई पड़ना भी माना जा सकता था। ग्रहण के दौरान, पृथ्वी की परछाई चंद्रमा पर पड़ती और उससे चंद्रमा काला नजर आता। कभी-कभी, पूर्णमासी के दौरान, चंद्रमा और सूर्य के बिल्कुल मध्य में पृथ्वी स्थित होती थी। और उस समय ही चंद्र-ग्रहण होता था।

पृथ्वी की चंद्रमा पर पड़ी परछाई से भी हम पृथ्वी के आकार के बारे में कुछ जानकारी प्राप्त कर सकते थे। चंद्रमा पर पृथ्वी की परछाई की किनार हमेशा वक्राकार होती और देखने में एक गोल का हिस्सा नजर आती थी।

यूनानियों ने आकाश के अलग-अलग भागों में घटे चंद्र-ग्रहणों का अध्ययन किया। उन्होंने अनेकों

चंद्र-ग्रहण देखे। कुछ में चंद्रमा आकाश में ऊपर, कुछ में नीचे था। कुछ में चंद्रमा क्षितिज पर था। पर चंद्रमा की आकाश में स्थिति के बावजूद उस पर पड़ी पृथ्वी की परछाई हमेशा किसी गोलाकार ही नजर आती थी।

इससे एक बात स्पष्ट हुई। पृथ्वी की परछाई हमेशा गोलाकार होती थी। एक ही ऐसी आकृति थी जिससे ऐसा होना संभव थी। वो आकृति थी गोल - गेंद जैसी।

ईसा से 450 वर्ष पूर्व, यूनानी दार्शनिक फिलोलेयस, दक्षिणी इटली के पास रहते थे। प्रमाणों के आधार पर फिलोलेयस ने अपना पक्का मन बनाया - पृथ्वी का आकार गेंद जैसा गोल था।

फिलोलेयस ने बहुत से प्रमाण जुटाए। तारों की स्थिति में बदलाव, तट से दूर जाते जहाजों का समुद्र में लुप्त होना और चंद्र-ग्रहण के दौरान पृथ्वी की परछाई जैसे प्रमाणों से फिलोलियस एक निष्कर्ष पर पहुंचे - पृथ्वी गेंद जैसी थी और वो आकाश की बहुत बड़ी गेंद के बीच में स्थित थी।

जहां तक हम जानते हैं फिलोलेयस पहले इंसान थे जिन्होंने पृथ्वी के गोल होने का दावा किया था।

पर अभी भी एक प्रश्न बाकी था। अगर पृथ्वी गेंद जैसी थी और हम सभी उसकी सतह पर रह रहे थे तो फिर हम ऊपर से नीचे की ओर फिसलते क्यों नहीं थे? समुद्र का पानी भी फिसल कर नीचे की ओर क्यों नहीं गिरता था?

लोगों के अनुभव के अनुसार चीजें हमेशा नीचे की ओर ही गिरती थीं। अगर हम किसी चीज को ऊंचाई से छोड़ें तो वो नीचे को ही गिरेगी। पर यहां 'नीचे' का क्या मतलब होगा? अगर पृथ्वी गोल गेंद जैसी थी तो नीचे गिरने वाली हर वस्तु पृथ्वी के केंद्र की ओर गिरती।

यह बात पृथ्वी पर खड़े हर इंसान, चाहें वो कहीं भी क्यों न हो के लिए सच थी। वो इंसान, पृथ्वी पर किसी जगह, उसके बिल्कुल विपरीत स्थान, या और कहीं बीच में हो सकता था। स्थिति के बावजूद वो इंसान और उसके आसपास की सभी चीजें पृथ्वी के केंद्र की ओर आकर्षित होतीं। वो इंसान जहां भी खड़ा होता, पृथ्वी का केंद्र हमेशा उसके पैरों की दिशा में होता - इससे उसका सिर 'ऊपर' और पैर 'नीचे' की ओर होते।

ईसा से 350 साल पहले, यूनानी दार्शनिक अरस्तू ने इस बात को स्पष्ट रूप से व्यक्त किया था।

अरस्तू की कल्पना के अनुसार हर वस्तु पृथ्वी के केंद्र की ओर आकर्षित होती थी। इसका मतलब बिल्कुल साफ था। पृथ्वी का आकार गेंदनुमा होना जरूरी था।

5 कितनी बड़ी है हमारी पृथ्वी?

अरस्तू के बाद के सभी चिंतक पृथ्वी की आकृति को गेंदनुमा मानने पर सहमत हो गये थे। पर पृथ्वी आखिर कितनी बड़ी थी?

इस प्रश्न का हल पैदल चल कर निकाला जा सकता था। अगर कोई पृथ्वी की गेंद की एक पूरी परिक्रमा लगाता, और शुरू के बिंदु से वापिस आने तक की दूरी माप पाता, तो वो पृथ्वी के सही नाप जान पाता।

पर इसे करने का तब कोई तरीका नहीं था। जब आदमी किसी भी दिशा में आगे जाता तो अंत में वो

किसी समुद्र के तट पर जा पहुंचता। आगे जाने के लिए के उसे महासागर में हजारों मील का सफर तय करना पड़ता। यूनानियों के पास उस समय इतनी लंबी यात्रा कर पाने वाले समुद्री जहाज नहीं थे।

क्या कोई ऐसा तरीका था, जिससे घर बैठे पृथ्वी के नाप का अनुमान लगा जा सकता था? ईसा से 240 वर्ष पूर्व एक यूनानी चिंतक इरूतोसथिनीज ने इस कठिन प्रश्न का हल खोजा।

उसका हल कुछ-कुछ इस प्रकार था...

अगर पृथ्वी गेंदनुमा थी तो सूर्य का प्रकाश पृथ्वी के भिन्न हिस्सों पर अलग-अलग कोणों पर पड़ता। आप पृथ्वी पर एक ऐसे स्थान पर हैं जहां सूर्य की किरणें आप पर ऊपर से एकदम सीधी, लंबवत पड़ रही हैं। क्योंकि पृथ्वी की सतह एक गोल वक्र में मुड़ती है इसलिए आप से कुछ सौ मील दूर स्थित किसी अन्य स्थान पर सूर्य की किरणें थोड़ी तिरछी दिशा में होंगी। यह स्थान आपसे जितना ज्यादा दूर होगा, सूर्य की किरणें उतनी ही अधिक तिरछी दिशा में होंगी। किरणों के तिरछेपन को आप उनके द्वारा बनाई परछाई से नाप सकते हैं।

आप अपने स्थान पर एक छड़ को जमीन में एकदम लंबवत गाढ़ सकते हैं। अगर इस छड़ पर सूर्य की किरणें एकदम ऊपर से लंबवत, सीधी दिशा पर पड़ेंगी तो छड़ की कोई परछाई नहीं बनेगी। अगर किरणें छड़ से एक छोटे कोण पर टकरायेंगी तो छड़ की एक छोटी परछाई बनेगी। किरणें जितनी अधिक तिरछी होंगी, परछाई उतनी ही अधिक लंबी होगी।

अब आप कल्पना करें। दो एक-जैसी छड़ें जमीन में लंबवत गढ़ी हैं। उनके बीच की दूरी 500 मील है। किसी एक क्षण, सूर्य की किरणें एक छड़ की सीध की में हैं। इससे छड़ की कोई परछाई नहीं बनेगी। पर क्योंकि दूसरी छड़ पर किरणें थोड़ी तिरछी दिशा में टकरायेंगी इसलिए इस छड़ की छोटी परछाई बनेगी।

अगर पृथ्वी बहुत बड़ी होगी तो उसकी सतह 500 मील में बहुत कम ही मुड़ेगी। इस वजह से दूसरी छड़ पर सूर्य की किरणें हल्की सी तिरछी दिशा में पड़ेंगी और उससे बहुत छोटी सी परछाई बनेगी। अगर पृथ्वी छोटी होगी तो उसकी सतह 500 मील में ज्यादा मुड़ेगी और इस स्थिति में दूसरी छड़ की लंबी परछाई बनेगी।

दो निश्चित दूरी पर स्थित स्थानों के बीच, परछाईयों के अंतर को मापकर ज्यामिति द्वारा उस गेंदनुमा वस्तु के नाप को जाना जा सकता है।

इरूतोसथिनीज को बताया गया कि जून 21 (साल का सबसे लंबा दिन) को अगर दक्षिणी मिस्त्र के शहर साईन में एक छड़ को लंबवत जमीन में गाढ़ा जाए तो उसकी कोई परछाई नहीं बनती थी। इरूतोसथिनीज उस समय उत्तरी मिस्त्र के शहर एलिक्जैंडरिया में काम करते थे। उन्होंने उसी दिन अपने शहर में एक छड़ गाढ़ी और उसकी परछाई को नापा। साईन और एलिक्जैंडरिया के बीच की दूरी - 500 मील भी इरूतोसथिनीज को मालूम थी।

इस जानकारी के आधार पर इरूतोसथिनीज ने जो हिसाब लगाया उसके अनुसार पृथ्वी की परिधि 25,000 मील और उसकी त्रिज्या 8,000 मील निकली।

सभी लोग इरूतोसथिनीज की इस गणना से सहमत नहीं थे। बहुत से यूनानी चिंतकों के अनुसार पृथ्वी का यह आकार बहुत बढ़ा-चढ़ा था। उनमें से कईयों की गणना के हिसाब से पृथ्वी की परिधि ज्यादा-से-ज्यादा 18,000 मील बड़ी थी। बहुत से प्राचीन यूनानियों को पृथ्वी का यह छोटा नाप ज्यादा

सही लगा।

150 ईसवीं के करीब यूनानी खगोलशास्त्री टौलुमी ने भूगोल विषय पर एक पुस्तक लिखी। इसमें उन्होंने पृथ्वी की परिधि को 18,000 मील बताया। इस पुस्तक को बहुत प्रतिष्ठा मिली। उसका नतीजा यह हुआ कि उसके अगले 1,000 साल तक सारे दार्शनिक टौलुमी की बात को सही मानते रहे।

पृथ्वी वास्तव में कितनी बड़ी है? यह प्रश्न 1400 ईसवीं में अचानक बहुत महत्वपूर्ण हो गया। पश्चिमी यूरोप के बहुत से देश, पूर्व के कई देशों के साथ व्यापार करना चाहते थे। यूरोप के देश भारत, चीन, जापान और दक्षिण-पूर्व एशिया के देशों से व्यापार बढ़ाना चाहते थे। यह सब देश 'इंडीज' के नाम से जाने जाते थे।

पूर्व के इन देशों में रेशम और मसालों का अपार भंडार था और यूरोप के लोगों को इन चीजों की सख्त जरूरत थी। दुर्भाग्य की बात यह थी कि यूरोप से 'इंडीज' पहुंचने का कोई सरल रास्ता न था। आप जमीन पर हजारों मील का सफर कर सकते थे। पर उन दिनों जमीन पर लंबी यात्रायें करना कोई बहुत आसान नहीं था। इस यात्राओं में ऐसे बहुत से देशों से होकर गुजरना होता था जो उस समय यूरोपीय देशों के दुश्मन थे।

इंडीज को समुद्र के जरिए पहुंचना ज्यादा आसान था। पर इसे कैसे करा जाए यह किसी को नहीं पता था। समुद्र द्वारा अफ्रीका की परिक्रमा लगाना एक संभावना थी। परंतु उन दिनों किसी को भी अफ्रीका के आकार-प्रकार के बारे में कुछ भी नहीं पता था। सन 1418 के आसपास पुर्तगाल ने अपने समुद्री जहाजों को अफ्रीका की खोज के लिए भेजा। इसके करीब 70 साल बाद 1487 में, अंततः एक पुर्तगाली नाविक अफ्रीका के दक्षिणी सिरे पर पहुंच पाया।

इस बीच एक इतालवी नाविक क्रिस्टोफर कोलंबस को लगा कि इंडीज जाने के लिए अफ्रीका की परिक्रमा करने की शायद आवश्यकता ही नहीं थी। क्या इंडीज तक पहुंचने के लिए पहले अफ्रीका तक दक्षिण का सफर करना और फिर दुबारा उत्तर की ओर यात्रा जरूरी था? शायद इंडीज तक पहुंचने का कोई और छोटा रास्ता होगा।

पश्चिमी यूरोप से एशिया के पूर्व में बसे देशों का रास्ता हजारों मील लंबा था। हजारों मील की यह दूरी, पृथ्वी के वक्र के अनुसार धीरे-धीरे करके मुड़ती थी। शायद पृथ्वी के दोनों ओर के वक्र आपस में आकर एक-दूसरे से कहीं मिलते हों।

क्या समुद्री जहाजों से पश्चिम की ओर यात्रा करके इंडीज तक जल्दी पहुंचा जा सकता था?

इस बात का उत्तर पृथ्वी के सही नाप पर निर्भर करता था।

इरूतोसथिनीज के अनुसार पृथ्वी की परिधि 25,000 मील लंबी थी, और यूरोप से इंडीज के बीच की जमीनी दूरी लगभग 9,000 मील थी। इस स्थिति में कोलंबस को इंडीज तक पहुंचने के लिए पश्चिम की ओर 16,000 मील का सफर करना पड़ता। उस समय इतनी लंबी यात्रा करने वाले जहाज नहीं थे।

पर टौलुमी का मत के अनुसार पृथ्वी की गोल परिधि सिर्फ 18,000 मील थी। इस स्थिति में पश्चिमी यूरोप से इंडीज के बीच की समुद्री दूरी सिर्फ 6,000 मील ही रह जाती। और अगर एशिया के पूर्व और यूरोप के पश्चिम में कुछ द्वीप हुए तो फिर यूरोप से इंडीज की समुद्री यात्रा मात्र 3,000 मील की रह जाती।

कोलंबस ने स्पेन के राजा और रानी को इस दूरी के महज 3,000 मील होने का आश्वासन दिया। फिर

अगस्त, 1492 ने तीन समुद्री जहाजों में कोलंबस ने पश्चिम की अपनी यात्रा शुरू की।

असल में कोलंबस का अनुमान गलत निकला। इंडीज उसके अनुमान से कहीं अधिक दूर था। कोलंबस को यह नहीं पता था कि यूरोप और एशिया के बीच में बड़े-बड़े महाद्वीप थे। कोलंबस के अनुमान के अनुसार इन महाद्वीपों के पूर्वी सिरे के आसपास ही एशिया के पूर्वी द्वीप स्थित थे।

अक्टूबर 12, 1492 को कोलंबस एक छोटे द्वीप पर पहुंचा। उसे लगा कि वहां से इंडीज बहुत पास होगा। उसने अपने जहाजों से वहां स्थित कई बड़े द्वीपों की छान-बीन की। कोलंबस की गल्ती की वजह से यह द्वीप आज भी 'वेस्ट इंडीज' के नाम से जाने जाते हैं।

इन द्वीपों के निवासियों को कोलंबस ने 'इंडियन्स' के नाम से संबोधित किया। इसलिए हम आज भी इन महाद्वीपों के लोगों को उनके मूल पूर्वजों के इसी नाम से बुलाते हैं।

कोलंबस को अंत तक पक्का विश्वास था कि वो इंडीज पहुंच गया था। 1506 में कोलंबस का देहांत हो गया। परंतु कोलंबस के अन्य साथी उसकी बात से पूर्णतः सहमत नहीं थे। इससे पहले कई लोगों ने जमीन के रास्ते चीन की यात्रा की थी और वहां के वर्णन लिखे थे। पर इन द्वीपों और उन वर्णनों में कोई तालमेल नहीं था।

कुछ लोगों के अनुसार कोलंबस ने एक नए महाद्वीप को खोज निकाला था। जिस व्यक्ति ने यह बात सबसे पहले कही वो इटली का नाविक एमेरिकस विस्पुकस था। एक जर्मन भूगोलशास्त्री मार्टिन वैलजेम्यूरलर को विस्पुकस की बात सही जंची। 1507 में मार्टिन ने सुझाया कि नये महाद्वीपों को इतालवी नाविक एमेरिकस विस्पुकस के सम्मान में अमरीका का नाम दिया जाए।

अब तक पुर्तगाल के नाविक अफ्रीका की परिक्रमा करके इंडीज पहुंचने में सफल हो गए थे। स्पेन ने नये महाद्वीपों को खोज निकाला था, पर वहां के लोग इंडीज के लोगों जितने धनी और सभ्य नहीं थे।

फर्डीनैंड मुजेलेन एक पुर्तगाली नाविक था। बहुत साल नौकरी करने के बाद उसे लगा जैसे पुर्तगाली सरकार ने उसके साथ धोखा किया हो। वो गुस्से में स्पेन गया और उसने स्पेन को राजा को इंडीज पहुंचने का एक नायाब रास्ता बताया। इसमें न तो अफ्रीका की परिक्रमा लगानी थी और न ही पुर्तगालियों से लड़ाई करनी थी। इसके लिए बस पश्चिम की ओर समुद्री यात्रा करनी थी और अमरीका के जाने के बाद बस आगे का सफर जारी रखना था।

1519 में मुजेलेन ने पांच समुद्री जहाजों में अपना सफर शुरू किया। वो दक्षिणी अमरीका तक आया और वहां से कोई नई राह खोजने लगा। अंत में वो दक्षिणी सिरे पर पहुंचा जहां उसे एक सकरा रास्ता दिखा, जो आज भी 'स्ट्रेट्स ऑफ मुजेलेन' (मुजेलन जलडमरूमध्य) के नाम से जाना जाता है।

इस सकरे रास्ते के बाद वो एक अन्य महासागर में पहुंचा। इस महासागर में उसका जहाज शांत मौसम में हफ्तों यात्रा करता रहा। मुजेलेन ने इस महासागर को 'पैसिफिक' यानि शांत नाम दिया। हम 'पैसिफिक ओशन' को प्रशांत महासागर के नाम से जानते हैं। वैसे प्रशांत महासागर में बहुत तूफान आते हैं, परंतु उसका पुराना नाम अभी भी चला आ रहा है।

मुजेलेन को प्रशांत महासागर बहुत विशाल और सूना लगा। 99 दिनों की यात्रा में उसे कहीं भी जमीन या टापू नहीं दिखाई दिया। जहाज के कर्मचारियों का भोजन और खाना खत्म हो गया और वो लगभग मौत की कगार पर आ पहुंचें। तब वे गुआम द्वीप पहुंचें जहां उन्हें राहत मिली।

उसके बाद जहाजों का बेड़ा फिलीपीन्स द्वीप पहुंचा। यहां मुजेलेन स्थानीय लोगों के साथ एक झगड़े

में मारा गया।

खोज अभियान जारी रहा। अंत में तीन साल की यात्रा के बाद 1522 में बेड़ा वापिस स्पेन पहुंचा। अभियान के बाद पांच में से केवल एक जहाज ही बचा और केवल 18 नाविक ही जीवित लौटे।

मुजेलेन के अभियान ने पहली बार पृथ्वी की परिक्रमा लगाई। इस यात्रा से पृथ्वी कितनी बड़ी है इस बात के पुख्ता प्रमाण मिले। इससे इरूतोसथिनीज द्वारा 1,800 वर्ष पूर्व लगाये पृथ्वी की परिधि के अनुमान की पुष्टि हुई।

पृथ्वी की परिधि 25,000 मील है। टौलुमी और अन्य लोगों ने जिन्होंने पृथ्वी को छोटा समझा था, उनका अनुमान गलत था।

अगर उस समय कुछ लोगों ने पृथ्वी के छोटे होने का अनुमान नहीं लगाया होता, तो हो सकता है कोलंबस ने अपना अभियान ही छोड़ दिया होता। और फिर शायद अमरीका की खोज ही नहीं हुई होती। कई बार गल्तियों से भी कुछ लाभ होता है।

मुजेलेन के अभियान के बाद पृथ्वी के आकार की कहानी खत्म नहीं होती।

1961 से बाद अंतरिक्ष यात्रियों ने पृथ्वी की कक्षा की परिक्रमा की। फिर अंतरिक्ष यात्रियों ने पृथ्वी से बहुत दूर-दूर की यात्रायें की। 1969 में मनुष्य ने पहले बार चंद्रमा पर कदम रखा।

रॉकेट में बैठे अंतरिक्ष यात्री बहुत दूर से पृथ्वी को निहार सके।

उन्होंने देखा कि पृथ्वी का आकार गोल था। अंतरिक्ष से भेजे चित्रों से पृथ्वी के निवासी भी पृथ्वी के गोल आकार को स्पष्ट रूप से देख पाए।

पृथ्वी गोल निकली। जिन यूनानी दार्शनिकों ने 2,500 वर्ष पहले तारों, जहाजों और ग्रहणों के अध्ययन के बाद तर्क के आधार पर पृथ्वी को गोल करार दिया था, उनका मत बिल्कुल सच था।

अंत (29 दिसंबर 2005)